इतने गुस्से में क्यों हैं लोग ?

यह कितना निर्मम समय है कि लोग इतने गुस्से से भरे हुए हैं। दिल्ली में डा. पंकज नारंग की जिस तरह पीट-पीट कर हत्या कर दी गयी,वह बात बताती है कि हम कैसा समाज बना रहे हैं। साधारण से वाद-विवाद का ऐसा रूप धारण कर लेना चिंता में डालता है। लोगों में जैसी अधीरता,गुस्सा और तुरंत प्रतिक्रिया देने का अंदाज बढ़ रहा है वह बताता है कि, हमारे समाज को एक गंभीर इलाज की जरूरत है। सोचना यह भी जरूरी है कि क्या कानून का कोई खौफ लोगों के भीतर बचा है या अब सब कानून को हाथ में लेकर खुद ही अपने फैसले करेगें। एक स्कूटी सवार को रबर गेंद लग जाए और वह नाराजगी में किसी की हत्या कर डाले, यह खबर बताती है कि हम कैसा संवेदनहीन समाज बना रहे हैं। कानून अपने हाथ में लेकर घूमते ये लोग दरअसल भारतीय राज्य और पुलिस के लिए भी एक चुनौती हैं।

गुस्से से भरे लोग क्या यूं ही गुस्से में हैं या उसके कुछ सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक कारण भी हैं। बताया जा रहा है रहा है मारपीट करने वाले लोग बेहद सामान्य परिवारों से हैं और उनमें कुछ बगल की झुग्गी में रहते थे। एक क्षणिक आवेश किस तरह एक बड़ी घटना में बदल जाता है, यह डा. पंकज के साथ हुआ हादसा बताता है। गुस्से और आक्रोश की मिली-जुली यह घटना बताती है लोगों में कानून का खौफ खत्म हो चुका है। लोगों की जाति-धर्म पूछकर व्यवहार करने वाली राजनीति और पुलिस तंत्र से ज्यादातर समाज का भरोसा उठने लगा है। आज यह सवाल पूछना कठिन है, किंतु पूछा जाना चाहिए कि डा. नारंग अगर किसी अल्पसंख्यक वर्ग या दलित वर्ग से होते तो शेष समाज की क्या इतनी सामान्य प्रतिक्रिया होती ? इस घटना को मोदी सरकार के विरूद्ध हथियार की तरह पेश किया जाता। इसलिए सामान्य घटनाओं और झड़पों को राजनीतिक रंग देने में जुटी मीडिया और राजनीतिक दलों से यह पूछा जाना जरूरी है कि एक मनुष्य की मौत पर उनमें समान संवेदना क्यों नहीं है ? क्यों वे एक इंसान की मौत को धर्म या जाति के चश्मे से देखते हैं ?

डा. नारंग की मौत हमारी इंसानियत के लिए एक चुनौती है और समूची सामाजिक व्यवस्था के लिए एक काला घब्बा है। हम एक ऐसा समाज बना रहे हैं, जहां सामान्य तरीके से जीने के लिए भी, हमें वहशियों से बचकर चलना होगा। भारत जैसे देश में जहां पड़ोसी के लिए हम कितनी भावनाएं रखते हैं और उसके सुख-दुख में उसके साथ होने की कामना करते हैं। लेकिन यह घटना बताती है कि हमारे पड़ोसी भी कितने हृदयहीन हैं, वे कैसी पशुता से भरे हुए हैं, उनके मन में हमारे लिए कितना जहर है। समाज में फैलती गैरबराबरी-ऊंच-नीच, जाति-धर्म और आर्थिक स्थितियों के विभाजन बहुत साफ-साफ जंग की ओर इशारा कर रहे हैं। ये स्थितियां बद से बदतर होती जा रही हैं, क्योंकि परिवारों में हम बच्चों को अच्छी शिक्षा और दूसरे को सहन करने, साथ लेने की आदतें नहीं विकसित कर रहे हैं।

एकल परिवारों में बच्चों की हर जिद का पूरा होना जरूरी है और वहीं सामान्य परिवारों के बच्चे तमाम अभावों के चलते एक प्रतिहिंसा के भाव से भर रहे हैं। एक को सब चाहिए दूसरे को कुछ मिल नहीं रहा है-ये दोनों ही अतियां गलत हैं। समाज में संयम का बांध टूटता दिख रहा है। तेजी से बढ़ती आबादी, सिमटते संसाधन, उपभोग की बढ़ती भूख, बाजारीकरण और बिखरते परिवारों ने एक ऐसे युवा का सृजन किया है जो गुस्से में है और संस्कारों से मुक्त है। संस्कारहीनता और गुस्से का संयोग इस संकट को गहरा कर रहा है। जहां माता-पिता अन्यान्य कारणों से अपनी संततियों को सही शिक्षा नहीं दे पा रहे हैं, वहीं विद्यालय और शिक्षक भी विफल हो रहे हैं। इस संकट से उबरने में सामाजिक संगठनों, परिवारों का एकजुट होना जरूरी है।

बचपन से ही बच्चों में सहनशीलता, संवाद और साहचर्य को सिखाने की जरूरत है। दिल्ली की हृदय विदारक घटना में जिस तरह नाबालिग बच्चों ने आगे बढ़कर हिस्सा लिया और एक परिवार को उजाड़ दिया वह बात बहुत चिंता में डालने वाली है। किसी भी घटना को हिंदू और मुसलमान के नजरिए से देखने के बजाए यह देखना जरूरी है कि इसके पीछे मानसिकता क्या है? इसी हिंसक मानस का रूप आप हरियाणा के जाट आंदोलन में देख सकते हैं जहां अपने पड़ोसियों और अपने शहर के साथ हिंसक आंदोलनकारियों ने क्या किया। इस हिंसक वृत्ति का विस्तार हमें रोकना ही होगा। हमारे आसपास और परिवेश में अनेक ऐसी घटनाएं घट रही हैं, जिसमें समाज का हिंसक चेहरा उभर कर सामने आ रहा है। सबसे बड़ी बात यह है कि इन प्रवृत्तियों के खिलाफ हमें साथ आना और एकजुट होना भी सीखना होगा। सार्वजनिक स्थलों पर, बसों में, ट्रेनों में स्त्रियों के विरूद्ध हो रहे अपराध हों या हिंसक आचरण- सबको हम देखकर चुप लगा जाते हैं।

देश में बढ़ रही हिंसा और अराजकता के विरूद्ध सामाजिक शक्ति को एकत्र होना होगा। सबसे बड़ी बात अपने आसपास हो रहे अपराध और अन्याय के प्रति हमारी खामोशी हमारी सबसे बड़ी शत्रु है। अकेले पुलिस और सरकार के भरोसे बैठा हुआ समाज, कभी सुख से नहीं रख सकता। होते हुए अन्याय को चुप होकर देखना और प्रतिक्रिया न देना एक बड़ा संकट है ऐसे में मनोरोगियों और अपराधियों के हौसले बढ़ते हुए दिखते हैं। समाज को भयमुक्त और आतंक से मुक्त करना होगा। जहां हर बच्चा, बच्ची सुरक्षित होकर अपने बचपन का विकास कर सके,जहां पिता और मां अपनी पीढ़ी को योग्य संस्कार दे सके। बदली हुयी दुनिया में हमें ज्यादा मनुष्य बनने के यत्न करने होगें। इसलिए एक शायर कहते हैं- आदमी को मयस्सर नहीं इंसा होना ।हमें अपनी आने वाली पीढ़ी को इंसानियत के पाठ पढ़ाने होगें। परदुखकातरता सिखानी होगी।

दूसरों के दुख में दुखी होना और दूसरों के सुख में प्रसन्न होना यही संस्कृति है। इसका विपरीत आचरण विकृति है। हमें संस्कृति और इंसानियत के साझा पाठ सीखने होगें। डा. नारंग की हत्या हमारे लिए चेतावनी है और एक पाठ भी कि हम आज भी संवेदना से, इंसानियत से चूके तो कल बहुत देर हो जाएगी। एक नया समाज बनाने की आकांक्षा से भरे-पूरे हम भारतवासी किसी भी इंसानी हत्या को इंसानियत की हत्या मानें और दुबारा यह दोहराया न जाए, इसके लिए सचेतन प्रयास करें। अपने धर्मों की ओर देखें वे भी हमें यही बता रहे हैं। इस्लाम बता रहा है कि कैसे पड़ोसी के साथ रहें, ईसाईयत करूणा को प्राथमिकता दे रही है, हिंदुत्व भी वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को ही समूची मनुष्यता में रूपांतरित करने का इच्छुक है। लोककवि तुलसीदास भी इसी बात को कह रहे हैं-परहित सरिस धरम

नहीं भाई, परपीड़ा सम नहीं अधमाई। यानि दूसरों का हित करना ही सबसे धर्म है और दूसरे को पीड़ा देना सबसे बड़ा अधर्म है। गुस्से में अंधे हो चुके युवाओं और उनके माताओं-पिताओं की एक बड़ी जिम्मेदारी है कि वे एक बार फिर जागृत विवेक की ओर लौटें ताकि मनुष्यता ऐसे कलंकों से बचकर अपना परिष्कार कर सके। डा. नारंग की हत्या का सबक यही है कि हम अपने क्रोध पर नियंत्रण करें और अपनत्व के दायरे को विस्तृत करें।

(लेखक माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल में जनसंचार विभाग के अध्यक्ष हैं)